03/FH/CC/M-2023-38

बिहार लोक सेवा आयोग

मुख्य परीक्षा

68th BPSC (2023)

(Held on 18-05-2023)

निबंध (Essay) पेपर

मॉडल उत्तर के साथ

1 Forest creates its own trees. It does not wait for the people to throw seeds.
जंगल अपने पेड़ स्वयं तैयार करता है। यह लोगों के जंगल में आकर बीज फेंकने का इंतजार नहीं करता है।

कुशीनगर में बुद्ध के महापरिनिर्वाण से पूर्व जब उनके प्रिय शिष्य आनंद ने यह पूछा कि ''सत्य का मार्ग दिखाने के लिए जब आप या आप के जैसा कोई पृथ्वी पर नहीं रहेगा तब हम कैसे अपने जीवन को दिशा दे सकेंगे?'' तब भगवान बुद्ध ने जीवन में स्वावलंबन एवं आत्मबल को महत्व देते हुए कहा कि- **''अप्प दीपो भवः''** अर्थात् अपना दीपक स्वयं बनो। दूसरों से आस लगाना, अपेक्षा पालना और आलसी होकर भाग्य भरोसे बैठने से समस्या का समाधान नहीं होता बल्कि स्वयं आगे बढ़कर, पहल करते हुए सुधार, बदलाव, समस्या समाधान और निर्माण की नीव रखनी होती है।

वस्तुतः क्षमतावान, सामर्थ्यवान मनुष्य समय की प्रतीक्षा नहीं करते अपितु अपनी कर्मठता से समय को सही बनाते हैं। जिस प्रकार जंगल अपने सृजन के लिए किसी के द्वारा बीज फेंके जाने का इंतजार न करके अपना स्वयं का एक पारिस्थितिकी तंत्र निर्मित करता है उसी प्रकार व्यक्ति, समाज, संगठन और राष्ट्र को भी भौतिक पूंजी, सामाजिक पूंजी, सांस्कृतिक पूंजी का अर्जन एवं रक्षण करते हुए सकारात्मक कार्य-संस्कृति के साथ प्रगति के पथ पर आगे बढ़ना होता है। गाँधी जी का भी कहना था कि *जिस प्रकार के बदलाव की अपेक्षा आप दूसरों से करते वह बदलाव पहले आप स्वयं में करें।*

आदिकाल से लेकर वर्तमान तक किसी भी विकसित सभ्य समाज के निर्माण एवं विकास में यही प्रक्रिया काम करती है। समाज में जब व्यक्तिगत स्तर से लेकर संस्थागत स्तर तक सभी पक्ष स्वस्फूर्त तरीके से काम करते हुए अपने-अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं तब वह समाज विकास मार्ग पर अग्रसर होता है।

भारतीय समाज में प्रचलित रूढ़िवादिताओं एवं अंधविश्वासों की बेड़ियों को तोड़ने में राजा राम मोहन राम, ज्योतिबाबाई फुले, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, डी.वी. कर्वे आदि जैसे महापुरूषों ने किसी दूसरे के आने का इंतजार किए बिना सुधार का बीड़ा उठाया और उसे पूरा करने का प्रयास भी किया।

आर्थिक क्षेत्र में टाटा ग्रुप, नारायण मूर्ति, शिव नाडर आदि ने बिना किसी विदेशी मदद के स्वयं अपनी कर्मठता एवं जनमानस के प्रति अपने उत्तरदायित्व की भावना को समझते हुए कर्मचारियों एवं उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के साथ दानदाताओं की श्रेणी में स्वयं को स्थापित किया है। इनके प्रयासों से समाज और राष्ट्र में परार्थवादी भावना के विस्तार को नया बल मिला है।

सामाजिक क्षेत्र में मानव निर्मित समस्यायें जैसे- प्रदूषण, गंदगी, जल-जमाव, अतिक्रमण, ट्रैफिक जाम आदि का सामना करना पड़ता है। लोग इसका ठीकरा सरकार और उसकी एजेंसियों पर फोड़ते है और गुस्सा निकालते हैं। परन्तु ऐसी समस्याओं के निदान के संदर्भ में जंगल संदर्भित उपरोक्त कथन से प्रेरणा लेकर जन-जागरूकता, जन-सहभागिता और सामूहिक प्रयास के माध्यम से काफी हद तक नियत्रित किया जा सकता है।

भौगोलिक दृष्टिकोण से देखें तो भारत कुछ ऐसे राष्ट्रों से घिरा हुआ है जिनकी नियत एवं अतीत ठीक नहीं रहा है। इसीलिए भारत अमेरिका, रूस आदि का मुँह ताकने की बजाए लगातार रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने का प्रयास कर रहा है। इस क्रम में 'मेड इन इण्डिया' और 'मेक इन इण्डिया' इसे नये पंख दे रहे हैं।

भारत के पड़ोस में एक ओर पाकिस्तान जैसा देश हैं जो IMF, वर्ल्ड बैंक जैसे अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक संस्थाओं के साथ-साथ, OIC और अन्य विकसित राष्ट्रों से ये आस लगाए बैठा है कि वे उसकी आर्थिक समस्या से निजात दिलायेगें। परन्तु पाकिस्तान के लिए यह दिवास्वप्न होता जा रहा है।

भारत की वर्तमान विदेश नीति भी जंगल के इसी पारिस्थितिकीतंत्र की द्योतक है जहां भारत देशहित को सर्वोपरि मानकर बिना किसी के सहयोग की आस लगाए अपने मूल्यों पर दृढ़ खड़ा है एवं विश्व के अन्य देशों के लिए मिसाल बन कर उभर रहा है।

भारतीय दर्शन में इस जिजीविषा को पुरुषार्थ के नाम से जाना जाता है। कोई भी बड़ा निर्माण, आविष्कार, सृजन तभी हुआ है जब पुरुषार्थ ने बिना किसी की प्रतीक्षा किए आगे चलकर स्वयं नेतृत्व की कमान संभाली है। गीता में इसे कर्मयोग कहा गया है।

किसी और की प्रतीक्षा कि वह आए और हमारे जीवन का नेतृत्व करें, अकर्मण्यता है। किसी और के भरोसे अपने दायित्वों का त्याग पाप माना गया है। गीता में स्वधर्म पालन को कर्त्तव्य माना गया है और इसे बिना किसी फलासक्ति के निष्काम भाव से संपादन की बात की गयी है। यहाँ कर्मों में कुशलता को योग कहा गया है।

योग की इसी अवधारणा का दर्शन हम भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं में देख सकते हैं। जिनमें सर्वप्रमुख है- आत्मनिर्भर भारत । आत्मनिर्भरता, स्वनेतृत्व, उद्यमिता के आधारभूत तत्वों से ओतप्रोत यह योजना भारत के हर नागरिक को एक योद्धा के रूप में निर्मित करने का उद्देश्य रखती है।

कोविड काल के इस आत्मनिर्भरता और स्वस्फूर्तकारी नेतृत्व की प्रासंगिकता और अधिक बढ़ गई है। को-वैक्सीन, कोविशील्ड जैसे टीकों का अविष्कार, पी.पी.ई किट, वेंटिलेटर, सेनेटाइजर, मास्क आदि के निर्माण में भारत न केवल आत्मनिर्भर बना अपितु विश्व में एक आपूर्तिकर्ता भी बना।

जिस प्रकार जंगल में बीज के गिरने के बाद उसके अंकुरण से लेकर वृक्ष बनने तक सही तापमान, दशाओं, वर्षा, नमी, पशुओं से बचाव आदि का होना आवश्यक है ठीक उसी प्रकार कार्य के संकल्प से लेकर उसके कार्यान्वयन एवं परिणाम प्राप्ति तक हमें कई विचारों, सहारों एवं साथ की आवश्यकता पड़ती है।

नारायण मूर्ति को जहां यह सहयोग अपनी धर्मपत्नी सुधामूर्ति से मिला, वहीं गांधी जी के लिए यह आधार उनके राजनीतिक गुरु गोपाल कृष्ण गोखले में मिला। दशरथ मांझी के लिए उनकी पत्नी की मृत्यु ने इतना संकल्पित कर दिया कि अकेले ही मार्ग में बाधा बने पहाड़ को समतल कर दिया।

वस्तुतः हर अभिप्रेरणा का एक आधार है। किंतु सत्य यह है कि जहाँ बाह्य अभिप्रेरणाएं क्षणिक होती है, वहीं अंतःप्रेरणा अधिक प्रभावी और व्यवस्थाओं को बदलने वाली होती है।

यह कहावत सही है कि 'दैव दैव आलसी पुकारा'। उद्योगी पुरूष अपने कर्म से ख्याति अर्जित करते हैं, समस्याओं का समाधान करते हैं, वहीं कायर भाग्य के सहारे बैठें रहते हैं। आलस्य व्यक्ति को अकर्मण्य, कायर, परजीवी एवं भाग्यवादी बना देता है।

वस्तुतः हम सब इसी समान ऊर्जा पुंज से निर्मित हैं, हमारे अंदर सृजन की वही असीमित शक्ति है जो वृक्ष के एक बीज से जंगल का निर्माण करती है, जो बुद्ध बनकर भटके हुओं का रास्ता बनती है। और जो विवेकानंद के विचारों में उद्घोष करते हुए परिवर्तन का बिगुल फूंकती है-

''उठो, जागो, और तब तक न रुको
जब तक लक्ष्य ना प्राप्त हो जाए।।''

उद्यमिता एवं पुरुषार्थ के महत्व को चरितार्थ करते हुए सही ही कहा गया है कि-

''उँगलियाँ थाम कर गैरों की चलोगे कब तक,
जिंदगी आप ही बनती है, सहारों से नहीं।''

2 Literature is not only a source of knowledge, but also a form of moral and social activity.
साहित्य ज्ञान का केवल एक स्रोत ही नहीं है, साथ ही यह नैतिक और सामाजिक क्रिया का भी एक रूप है।

साहित्य मानव जीवन की ज्ञान-राशि और भाव-राशि का संचयन और उसकी सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति है। साहित्य न केवल सामाजिक परीस्थितियों, द्वन्द्वों और विसंगतियों को प्रतिबिम्बित करता है बल्कि मानव जीवन की उदात्त एवं अनुदात्त भावनाओं को अभिव्यक्त करते हुए समाज के लिए जो हितकर है उसे बढ़ावा देने का प्रयास करता है। जीवन में साहित्य के महत्व को देखते हुए कहा गया है कि-

''अंधकार है वहाँ, जहाँ आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह देश, जहाँ साहित्य नहीं है॥''

साहित्य को ज्ञान-राशि का संचित कोष कहा जाता है। यह ज्ञान समाज का मार्गदर्शन करता है। साहित्य ज्ञान-विज्ञान, दर्शन, गणित, रसायनशास्त्र, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि का स्त्रोत है जिसके फलस्वरूप भारतीय संस्कृति का उत्तरोत्तर संरक्षण एवं विकास संभव हो पाया है।

उदाहरणस्वरूप- दीपवंश, महावंश आदि ग्रंथों में जहाँ ऐतिहासिक ज्ञान है वहीं सुश्रुत संहिता और चरक संहिता में चिकित्सीय ज्ञान का भण्डार निहित है। आर्यभट्ट और मिहिर के ग्रंथों में खगोल और नक्षत्र का ज्ञान समाविष्ट है। पाणिनी द्वारा रचित अष्टाध्यायी व्याकरण के ज्ञान का भण्डार है।

साहित्यिक कृतियों के माध्यम से ना केवल इतिहास अपितु तात्कालिक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक प्रवृत्तियों के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है। संगम साहित्य से चोल, चेर, पांड्य राज्यों, कल्हण की राजतरंगिणी द्वारा कश्मीर के इतिहास की एवं कौटिल्य के अर्थशास्त्र द्वारा मौर्य शासन की जानकारी प्राप्त होती है।

कला का ज्ञान के स्रोत के रूप में भी साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका है। भरत मुनि द्वारा रचित नाट्यशास्त्र नाट्य कला का सबसे प्राचीन ग्रंथ है। वही संगीत का जन्म वैदिक ग्रंथ सामवेद से माना जाता है। मेगस्थनीज ने अपनी पुस्तक 'इण्डिका' में मौर्यकालीन इतिहास के साथ-साथ कला और साहित्य का भी उल्लेख किया है।

गणित के क्षेत्र में बौधायन द्वारा रचित शुल्बसूत्र प्राचीनतम ग्रंथ है। वह ब्रह्मगुप्त का ब्रह्मस्फुट सिद्धांत में शून्य का प्रयोग एक अलग अंक के रूप में किया जाने लगा। ब्रह्मगुप्त के खंडखाद्य ग्रंथ में पचांग बनाने की विधियों का उल्लेख है।

वैशेषिक दर्शन के प्रतिपादक महर्षि कणाद ने डॉल्टन से 2500 वर्ष पूर्व ही बता दिया की विश्व परमाणुओं से निर्मित है वहीं सांख्य दर्शन के प्रवर्तक महर्षि कपिल ने विकासवाद का सर्वप्रथम प्रतिपादन कर साहित्य की वैज्ञानिक प्रवृत्ति का परिचय दिया।

साहित्य ज्ञान के स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण है परंतु सामाजिक एवं नैतिक क्रिया के रूप में भी इसका और अधिक महत्व है। साहित्य को समाज के दर्पण की संज्ञा दी गई है। साहित्य एक तरफ समाज में होने वाले अन्याय, शोषण, भेदभाव, गरीबी, अशिक्षा, समंतवादी मानसिकता आदि के प्रति सामाजिक चेतना को जागृत करता है तो दूसरी तरफ जन्म, विवाह, बेटी की विरह-वेदना एवं विभिन्न त्यौहारों की लोकगीत, सोहर, लोरी, नाटक, उपन्यास, कविता आदि के माध्यम से जन-भावनाओं को अभिव्यक्त भी करता है। वस्तुतः साहित्य सूर्य के समान किसी देश के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, दार्शनिक एवं राजनीतिक संबंधी पहलुओं पर प्रकाश डालता है।

वस्तुतः साहित्य मानव जीवन को सरस एवं बनाता है तथा उसमें नैतिकता एवं आदर्श स्थापित करता है। यह मनुष्य के भावों, संवेदनाओं को जीवित रखने वाली संजीवनी है। यह न केवल मनुष्य को संवेदनशील बनाता है अपितु अन्याय एवं शोषण के विरुद्ध लड़ने की शक्ति भी प्रदान करता है। पंचतंत्र और हितोपदेश की नैतिक शिक्षाप्रद कहानियाँ सरल एवं रोचक तरीके से सही-गलत का बोध कराते हुए संवेगात्मक बुद्धि को विकसित करने में मददगार है।

बौद्ध साहित्य जीवन में मध्यम मार्ग का पालन और 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' की भावना के साथ जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। अष्टांगिक मार्ग का विचार कटु वचन, अनैतिक कर्म और भ्रष्ट आचरण से विरत रहते हुए सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है।

तेलगु साहित्य 'तिरूक्कुरल' में मनुष्य को शांतिपूर्ण जीवन-यापन की विधियाँ बताते हुए नैतिकता का बोध कराया गया है।

सहित्य मानव की सामाजिक चेतना को जागृत करता है, उसे दिशा दिखाता है और समाज में परिवर्तन का बिगुल भी बजाता है। इतिहास साक्षी है कि फ्रांस की क्रांति हो या भारत का स्वतंत्रता संग्राम, इनको जागृत एवं प्रेरित करने में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसलिए अकबर इलाहाबादी ने भी कहा है-

''खींचो न कमानों को न तलवार निकालो।
जब तोप मुकाविल हो तो अखबार निकालो॥''

वर्तमान में विकास की अंधी दौड़ और उपभोक्तावादी प्रवृत्ति ने साहित्य के प्रति लोगों की अभिरूचि को घटा दिया है क्योंकि अर्थव्यवस्था से इसका सीधा संबंध नहीं है। आज मनुष्य यंत्रवत् होता जा रहा है। परिणामस्वरूप समाज में मूल्य संकट और अंतर्रात्मा के संकट की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। सहयोग, सहिष्णुता, क्षमाशीलता, दया, करुणा, प्रेम, परोपकार, सत्य एवं न्याय जैसे मूल्य कमजोर हो रहे हैं। इससे सामाजिक व्यवस्था खतरे में पड़ सकती है।

उपरोक्त संदर्भ में चरमराती व्यवस्था को साहित्य द्वारा सहारा दिया जा सकता है। निस्संदेह मनुष्य में पशु समान आदिम मनोवृत्तियाँ पाई जाती है जो थोड़ी सी उत्तेजना पाकर बाहर अभिव्यक्त होने लगती है। मनुष्य को इसी आदिम प्रवृत्ति से उठाने का कार्य साहित्य करता है। भर्तृहरि ने कहा भी है-

''साहित्य संगीत कला विहीनः, साक्षात् पशु पुच्छ विषाण हीनः।''

अर्थात् जो मनुष्य साहित्य, संगीत, कला से वंचित होता है वह बिना पूंछ तथा बिना सींगों वाले साक्षात् पशु के समान है।

गीता में स्थित प्रज्ञ, निष्काम कर्म एवं लोक संग्रह की अवधारणा समाज में नैतिकता की स्थापना हेतु आदर्श प्रस्तुत करती है। 'तेन व्यक्तेन भुंजीथा' जहाँ जीवन में त्यागपूर्वक भोग की बात करता है तो मुण्डकोपनिषद् में वर्णित 'सत्यमेव जयते' की अवधारणा हमें जीवन में सत्य और न्याय के पथ का दृढ़तापूर्वक अनुसरण की प्रेरणा देता है। तुलसीदास परोपकार करने हेतु प्रेरणा प्रदान करते हुए कहते हैं- **''परहित सरिस धरम नहिं भाई।''**

साहित्य समाज के प्रत्येक वर्ग यथा महिला, दलित आदि के उत्थान हेतु वकालत करता है। मनुस्मृति में कहा गया है- *''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।''*। 'गुलामगिरी' (ज्योतिबा फुले) एवं 'मूकनायक' (बाबा साहेब अंबेडकर) जैसे साहित्य दलित आवाज को संगठित करने की प्रयास करती है। दलित साहित्य, स्वाभिमान, स्वावलंबन, शिक्षा, संगठन, संघर्ष की बात कर दलितों को एकजुट करने एवं अधिकारों को लेने की बात करता है। वहीं स्त्री साहित्य स्त्री-पुरूष समानता के आदर्श में विश्वास करता है।

आज इस बात की महती आवश्यकता है कि तथ्यात्मक ज्ञान के साथ-साथ आदर्शों एवं मूल्यों का तालमेल बिठाया जाए। इसके लिए वांछनीय है कि दर्शन एवं साहित्य जैसे विषयों को शिक्षा प्रणाली में शामिल किया जाए जिससे सर्वांगीण विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सपूंर्ण मानव को गढ़ा जा सके। साहित्य ने मानवजाति को उदात्त जीवन शैली का महान संदेश दिया है-

''अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसाम् । उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥''

अर्थात् यह मेरा है, यह उसका है; ऐसी सोच संकुचित चित्त वाले व्यक्तियों की होती है; इसके विपरीत उदार चरित्र वाले लोगों के लिए तो यह सम्पूर्ण धरती ही एक परिवार जैसी होती है।